सोबन सिंह जीना विश्वविद्यालय ,अल्मोड़ा,उत्तराखंड

भारतीय काव्यशास्त्र की परंपरा

एम०ए०
प्रथम सेमेस्टर

पेपर प्रथम
Unit I

विषय लेखक

पंकज पुंडीर असिस्टेंट प्रोफेसर (हिंदी) ,राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय मुनस्यारी, पिथौरागढ़,उत्तराखंड

भारतीय काव्यशास्त्र की परंपरा:-

संस्कृत के काव्यशास्त्रीय उपलब्ध ग्रंथों के आधार पर भरतमुनि को काव्यशास्त्र का प्रथम आचार्य माना जाता है। उनका समय लगभग 400 ईसापूर्व से 100 ईसापूर्व के मध्य समय माना जाता है।

इस परंपरा के अंतिम आचार्य पंडितराज जगन्नाथ है इनका समय 17 वी शती है। इस प्रकार लगभग डेढ़-दो सौ सहस्त्र वर्षों का यह काव्यशास्त्रीय साहित्य अपनी व्यापक विषय-सामग्री अपूर्व एवं तर्क सम्मत विवेचन पद्धति और गंभीर शैली के कारण नूतन मान्यताओं को प्रस्तुत करने के बल पर भारतीय वाड्मय में अपना विशिष्ट स्थान रखता है।

काव्यशास्त्रीय आचार्यों का संक्षिप्त परिचय

(1) आचार्य भरतमुनि

भरतमुनि की प्रसिद्धि नाट्यशास्त्र ग्रंथ के रचयिता के रूप में है, उनके जीवन और व्यक्तित्व के विषय में इतिहास अभी तक मौन है। इस संबंध में विद्वानों का एक मत यह भी है कि भरत वस्तुतः एक काल्पनिक मुनि का नाम है। संस्कृत के प्राचीन ग्रंथों के उल्लेख अनुसार रंगमंच के अभिनेता को भरत कहा जाता था । नाट्यविधान के जो तत्व समय-समय पर निर्मित होते चले गए उनका संग्रह भरत के नाम पर कर दिया गया। इस ग्रंथ का संग्रह काल दूसरी शती ई० पू० और tisri शती ई० के बीच माना जाता है।

नाट्यशास्त्र नाट्यविधान का एक अमर विश्वकोश है। नाटक की उत्पत्ति , नाट्यशाला , विभिन्न प्रकार के अभिनय , नाटकीय सन्धियाँ , संगीत शास्त्रीय सिद्धांत आदि इसके प्रमुख विषय है। इनके अतिरिक्त 6 ठे, 7 वें और 17 वें अध्याय में काव्यशास्त्रीय अंगों - रस , गुण , दोष , अलंकार तथा छंद का भी निरूपण हुआ है । नाटक नायिका भेद का भी इस ग्रंथ में निरूपण है।

(2) भामह

भामह कश्मीर-निवासी कहे जाते हैं। इनका जीवन काल छ्ठी शती ई. का मध्य काल माना गया है। इनका प्रसिद्ध ग्रंथ काव्यालंकार है । इस ग्रंथ में ६ परिच्छेद है और कुल ४०० श्लोक। इसमें इस विषयों का निरूपण किया गया है- काव्य शरीर,अलंकार ,दोष ,न्याय-निर्णय और शब्दशुद्धि।

भामह अलंकारवाद के समर्थक थे । इन्होंने 'वक्रोक्ति' को सब अलंकारों का मूल माना है । काव्य का लक्षण सर्वप्रथम इन्होंने प्रस्तुत किया है ।दस के स्थान पर तीन काव्य गुणों की स्वीकृति भी इन्होंने सर्वप्रथम की है , इनके ग्रंथ की महत्व का प्रमाण इससे भी ज्ञात होता है कि उद्धट जैसे आचार्य ने भामह विवरण नाम से इनके ग्रंथ पर भाष्य लिखा था । आज यदि यह भाष्य उपलब्ध होता तो उससे भामह सम्मत सिद्धांतों के स्पष्टीकरण में पर्याप्त सहायता मिलती।

(3) दण्डी

दण्डी का समय सातवीं शती का उत्तरार्द्ध माना गया है । इनके तीन ग्रन्थ उपलब्ध हैं - काव्यादर्श , दशकुमारचरित और अवन्तिसुन्दरीकथा । प्रथम ग्रन्थ काव्यशास्त्र विषयक है , और शेष दो गद्य - काव्य हैं । काव्यादर्श में तीन परिच्छेद हैं और श्लोकों की कुल संख्या ६६० है । प्रथम परिच्छेद में काव्य - लक्षण , काव्य - भेद , रीति और गण का निरूपण है और द्वितीय परिच्छेद में अलंकारों का । तृतीय परिच्छेद में यमक , चित्र - बन्ध और प्रहेलिका के अतिरिक्त दोषों का भी निरूपण किया गया है । दण्डी अलंकारवाद के समर्थक थे । काव्य के विभिन्न अंगों को अलंकार में ही अन्तर्निहित समझना इनका मान्य सिद्धान्त था - यहाँ तक कि रस , भाव आदि को भी इन्होंने रसवत् , प्रेयस्वत् आदि अलंकार माना है । काव्यादर्श अत्यन्त लोकप्रिय ग्रन्थ रहा है । कहा जाता है कि सिंहली और कन्नड़ भाषाओं के काव्यशास्त्रीय ग्रन्थों , क्रमशः ' सिय - वश - लकर ' और ' कविराजमार्ग ' , पर काव्यादर्श का स्पष्ट प्रभाव है । संस्कृत में इस ग्रन्थ पर अनेक रोकाएं रची गयीं ।

(4) उद्धट

उद्भट कश्मीरी राजा जयापीड़ के सभा - पण्डित थे । इनका समय नवीं शती का पूर्वाद्ध है । इनके तीन ग्रन्थ प्रसिद्ध हैं - काव्यालंकारसारसंग्रह , भामहविवरण और कुमारसम्भव । इनमें से केवल प्रथम ग्रन्थ उपलब्ध है , जिसके ६ वर्गों में अलंकारों के लक्षण - उदाहरण प्रस्तुत किये गये हैं । अलंकारों के स्वरूप - निर्देश में प्रायः भामह का आश्रय लिया गया है । कुछ अलंकारों के उदाहरण स्वरचित कुमारसम्भव काव्य से भी लिये गये हैं । उद्भट अलंकारवादी आचार्य थे ।

(5) वामन

उद्धट के समान वामन भी कश्मीरी राजा जयापीड़ के सभा - पण्डित थे। इनका समय ८०० ई . के आसपास है । इनका प्रसिद्ध ग्रंथ काव्यालंकारसूत्रवृत्ति है । काव्यशास्त्रीय ग्रन्थों में यह पहला सूत्र - बद्ध ग्रन्थ है । सूत्रों की वृत्ति भी स्वयं वामन ने लिखी है । ग्रन्थ में ५ अधिकरण हैं । प्रत्येक अधिकरण में कुछ अध्याय हैं , और हर अध्याय में कुछ सूत्र। ग्रन्थ के पांचों अधिकरणों में अध्यायों की संख्या १२ है , और सूत्रों की संख्या ३१९।

(6) रुद्रट

रुद्रट नाम से कश्मीरी आचार्य मालूम पड़ते हैं । इनका जीवन - काल नवीं शती का आरम्भ माना जाता है । इनके ग्रन्थ का नाम काव्यालंकार है , जिसमें १६ अध्याय हैं और कुल ७३४ पद्य । १६ अध्यायों में से ८ अध्यायों में अलंकारों को स्थान मिला है , और शेष अध्यायों में काव्यस्वरूप , काव्यभेद , रीति , दोष , रस और नायक - नायिका - भेद का निरूपण है । यद्यपि रुद्रट अलंकारवादी युग के आचार्य हैं , किन्तु भरत के बाद रस का व्यवस्थित और स्वतंत्र निरूपण इनके ग्रन्थ में उपलब्ध है । नायक - नायिका - भेद , विशेषत : नायिका के प्रसिद्ध तीन भेद स्वकीया , परकीया और सामान्या का उल्लेख हमें यहाँ सर्वप्रथम मिला है ।

(7) आनन्दवर्धन

आनन्दवर्धन कश्मीर के राजा अवन्तिवर्मा के सभापण्डित थे। इनका जीवन - काल नवी शती का मध्य भाग है। इनका ख्याति ध्वन्यालोक नामक अमर ग्रन्थ के कारण है। ग्रन्थ के दो प्रमुख भाग है- कारिका और वृत्ति यद्यपि इस विषय में विद्वानों का मतभेद है कि इन दोनों भागों का कर्ता एक व्यक्ति है या दो हैं, पर अधिकतर विद्वान् आनन्दवर्धन को ही दोनों भागों का कर्ता मानते हैं।

(8) अभिनवगुप्त

अभिनवगुप्त दसवीं शती के अन्त और ग्यारहवीं शती के आरम्भ में विद्यमान थे। इनका काव्यशास्त्र के साथ - साथ दर्शनशास्त्र पर भी समान अधिकार था। यही कारण था कि काव्यशास्त्रीय विवेचन को आप अत्यन्त उच्च स्तर पर ले गये। ध्वन्यालोक पर 'ध्वन्यालोकलोचन ' और नाट्यशास्त्र पर ' अभिनवभारती ' नामक टीकाएं इसका प्रमाण हैं।

(9) राजशेखर

राजशेखर विदर्भ (बरार) के निवासी थे और कन्नौज के प्रतिहारवंशी महेन्द्रपाल और महीपाल के राजगुरु थे । इनका जीवन - काल दसवीं शती का प्रथमार्द्ध माना गया है । काव्यशास्त्र से सम्बद्ध काव्यमीमांसा नामक इनका एक ग्रन्थ प्रसिद्ध है , जो १८ भागों (अधिकरणों) में विभक्त है , पर अभी तक इसका ' कविरहस्य ' नामक एक ही भाग प्राप्त हो सका है , जिसे सर्वप्रथम गायकवाड़ ओरण्टियल सीरीज , बड़ौदा ने , और फिर बिहार - राष्ट्रभाषा - परिषद् ने हिन्दी - अनुवाद - सहित प्रकाशित कराया ।

(10) कुन्तक

कुन्तक का समय दसवी शती का अन्त तथा ग्यारहवी शती का आरम्भ माना जाता है । इनके प्रसिद्ध ग्रन्थ ' वक्रोक्तिजीवितम् ' में चार उन्मेष हैं । प्रथम उन्मेष में काव्य का प्रयोजन तथा वक्रोक्ति का स्वरूप और उसके छह भेद निर्दिष्ट किये गये हैं । द्वितीय उन्मेष में वक्रोक्ति के प्रथम तीन भेदों - वर्ण - विन्यासवक्रता , पदपूर्वार्धवक्रता तथा पदपरार्ध - वक्रता का , और तृतीय उन्मेष में वाक्यवक्रता का विस्तृत निरूपण है । अन्तिम उन्मेष में वक्रोक्ति के शेष दो भेदों - प्रकरणवक्रता और प्रबन्धवक्रता का विवरण है । कुन्तक प्रतिभासम्पन्न आचार्य थे । इन्होंने वक्रोक्ति के उक्त छह भेदों में काव्य के सभी अंगों को अन्तर्भूत करते हुए वक्रोक्ति को काव्य का ' जीवित ' माना ।

(11) क्षेमेन्द्र

क्षेमेन्द्र कश्मीर - निवासी थे । वे ११वीं शती के उत्तराद्ध में विद्यमान थे । इन के तीन ग्रन्थ प्रसिद्ध हैं - औचित्यविचारचर्चा , सुवृततिलक और कविकण्ठाभरण । प्रथम ग्रन्थ में औचित्य को लक्ष्य में रखकर इन्होंने वाणी के विभिन्न अंगों - वाक्य , गुण , रस , क्रिया , करण , लिंग , उपसर्ग , देश , स्वभाव आदि का स्वरूप निर्धारित किया है । द्वितीय ग्रन्य में छन्द के औचित्य का निर्देश है । तीसरा ग्रन्थ कवि - शिक्षा से सम्बद्ध है । इस ग्रन्थ में ५ सन्धियाँ (परिच्छेद) हैं । इनमें क्रमशः कवित्व - प्राप्ति के उपाय , कवियों के भेद , काव्य के गुण तथा दोष का विवेचन है ।

(12) भोजराज

भोजराज धारा के नरेश थे । उनका जीवन काल ११वी शती का प्रथमर्द्ध है। भोज कवियों के आश्रयदाता होने के अतिरिक्त स्वयं भी प्रगाढ़ आलोचक एवं काव्यशास्त्री थे । काव्यशास्त्र से सम्बद्ध इनके दो ग्रन्थ उपलब्ध हैं - सरस्वतीकण्ठाभरण और श्रृंगारप्रकाश ये दोनों विशालकाय हैं । प्रथम ग्रन्थ में पाँच परिच्छेद हैं । इनमें दोष , गुण , अलंकार और रस का विशद और संग्रहात्मक विवेचन है ।

(13) मम्मट

मम्मट कश्मीर के निवासी माने जाते हैं । इनका जीवनकाल ११वीं शती का उत्तराद्ध है । इनकी प्रख्याति ' काव्यप्रकाश ' के कारण है।

(14) विश्वनाथ

विश्वनाथ कदाचित् उड़ीसा के निवासी थे। इनका समय १४वीं शती का पूर्वाद्ध है। इनकी ख्याति ' साहित्यदर्पण ' नामक ग्रन्थ के कारण हुई है। विश्वनाथ ने मम्मट , आनन्दवर्धन , कुन्तक , भोजराज आदि के काव्य - लक्षणों का खण्डन प्रस्तुत करने के बाद रस को

काव्य की आत्मा घोषित करते हुए काव्य का लक्षण निर्धारित किया है। इन्होंने मम्मट के काव्यलक्षण का घोर खण्डन किया है , किन्तु फिर भी अपने ग्रन्थ की अधिकांश सामग्री के लिए ये मम्मट के ही ऋणी हैं। आश्चर्य तो यह है कि रसको काव्य की आत्मा मानते हुए भी इन्होंने आनन्दवर्धन तथा मम्मट के समान रस को ध्वनि के एक भेद ' असंलक्ष्यक्रमव्यंग्य ' ध्वनि का अपर नाम माना है।

(15) जगन्नाथ

जगन्नाथ का यौवनकाल दिल्ली के प्रसिद्ध शासक शाहजहाँ के दरबार में बीता था । शाहजहाँ ने इन्हें ' पंडितराज ' की उपाधि से विभूषित किया था। अत : इनका समय १७वी शती का मध्यभाग है। इनकी प्रसिद्ध रचना ' रसगंगाधर ' है ,जो अपूर्ण है। जगन्नाथ का काव्यलक्षण अधिकांशतः परिपूर्ण तथा सुबोध है। इन्होंने काव्य के चार भेद माने है - उत्तमोत्तम , उत्तम , मध्यम तथा अधम। ये ध्वनिवादी आचार्य थे , फिर भी रस के प्रति इन्होंने अधिक समादर प्रकट किया है। भरत - सूत्र पर उपलब्ध ग्यारह व्याख्याएं इसी ग्रन्थ में संकलित हैं। ये अन्यत्र भी प्राप्त हो सकती हैं। यह प्रथम आचार्य हैं जिन्होंने गुण को रस के अतिरिक्त शब्द , अर्थ और रचना का भी धर्म समान रूप से स्वीकार किया है , न कि गौण रूप से। जगन्नाथ की समर्थ भाषा - शैली , सिद्धान्त - प्रतिपादन की अद्भुत एवं परिपक्व विचार - शक्ति और खण्डन करने की विलक्षण प्रतिभा के कारण इन्हें प्रौढ़ एवं सिद्धहस्त आचार्य माना जाता है।

काव्य लक्षण

किसी रचनाकार द्वारा मनोबुद्धि से सृजित शाब्दिक संयोजन जो भावानुभूति व रसानुभूति में सहायक हो, काव्य कहलाता है | यह छंदबद्ध या छंदमुक्त एक ऐसी रचना होती है, जिसके माध्यम से सहृदय (जो ह्रदय आनंद प्राप्त करता हो) आनंद की प्राप्ति करता है । इन आनंद के क्षणों में वह ममत्व व परत्व के भावों से मुक्त हो साधारणीकरण दशा में पहुँच जाता है |

वर्तमान में काव्य शब्द का प्रयोग केवल कविता को दर्शाने के लिए किया जाता है जबकि, साहित्य शब्द को व्यापक अर्थों में लेते हुए विविध गद्य व पद्य विधाओं की अभिव्यक्ति के लिए व्यवहृत किया जाता है । संस्कृत आचार्यों ने 'साहित्य' शब्द की अभिव्यक्ति के लिए काव्य शब्द का ही प्रयोग किया था | उनकी दृष्टि से काव्य शब्द बहुत व्यापक और सूक्ष्म अर्थों की अभिव्यक्ति देने वाला था | विविध आचार्यों और विद्वानों ने काव्य के लक्षण निर्धारित किए हैं | अध्ययन की सुविधा के लिए हम उन्हें तीन वर्गों में बाँटते हैं -

1. संस्कृत आचार्यों द्वारा प्रदत्त काव्य लक्षण
2. हिंदी विद्वानों द्वारा प्रदत्त काव्य लक्षण
3. पाश्चात्य विद्वानों द्वारा प्रदत्त काव्य लक्षण

संस्कृत आचार्यों द्वारा प्रदत्त काव्य लक्षण :-

भारत में संस्कृत आचार्यों की एक लम्बी परंपरा रही है | इनमें से कई आचार्यों ने काव्य को परिभाषित करने का प्रयास किया है उनमें से कुछ प्रमुख संस्कृत आचार्यों के द्वारा प्रदत्त काव्य लक्षण इस प्रकार हैं-

1.अग्निपुराण के अनुसार -

काव्य को परिभाषित करने का सर्वप्रथम प्रयास 'अग्निपुराण' में किया गया, ऐसा माना जा सकता है 'अग्निपुराण' के 337 वें अध्याय के 607 वें श्लोक में वर्णित है कि

"संक्षेपाद्वाक्यमिष्टार्थ व्यवच्छिन्ना पदावली | काव्यं स्फुदलङ्कारं गुणवद् दोष वर्जितम् ||अर्थात - संक्षेप में इष्ट अर्थ को अभिव्यक्ति देने वाली अलङ्कार युक्त व गुणयुक्त एवं दोषरहित रचना काव्य है ।

2.भरतमुनि काव्य लक्षण -

आचार्य भरतमुनि ने अपने ग्रन्थ 'नाट्यशास्त्र' में काव्य के लक्षण को इस प्रकार परिभाषित किया है

" मृदुललित पदाठ्यं गूढ़ शब्दार्थहीनं जनपद सुखबोध्यं युक्तिमन्नृत्य योज्यम् बहुकृत संमार्ग संधि संधान युक्तं, सम्भवति शुभकाव्यं नाटकं प्रेक्षकाणाम् ||"

अर्थात - आचार्य भरत ने मृदु, लालित्य, गूढ़ शब्दार्थहीनता, सर्वसुगमता, युक्तिमत्ता, नृत्योपगीता, रस प्रवाहिनी और संधियुक्त नाटक को शुभ काव्य कहा है

3.भामह का काव्य लक्षण -

आचार्य 'भामह' ने अपने ग्रन्थ 'काव्यालंकार' के प्रथम परिच्छेद में 'काव्य के लक्षण' पर विचार करते हुए कहा है -

" शब्दार्थौ सहितौ काव्यम्" |

अर्थात् शब्द और अर्थ का सहभाव ही काव्य है।

4.रुद्रट -

इन्होंने काव्य के लक्षण के विषय में कहा है कि -

'ननु शब्दार्थौ काव्यम्'

अर्थात् शब्द और अर्थ के मेल को काव्य कहते हैं ।

5.कुंतक **-**

आचार्य कुंतक ने वक्रोक्ति को प्रमुखता देते हुए कहा कि -

शब्दार्थौ सहितौ वक्र कवि व्यापारशालिनी । बन्धे व्यवस्थितौ काव्यम् ।'

अर्थात् सुव्यवस्थित बंध में बंधा वक्र व्यापारशाली शब्दार्थ काव्य है ।

6.दण्डी **-**

आचार्य दण्डी का मत है कि -

'शरीरं तावदिष्टार्थ व्यवच्छिन्ना पदावली'

अर्थात् इष्ट अर्थ से युक्त पदावली काव्य है

7.आनंदवर्धन **-**

"शब्दार्थं शरीरं तावत् काव्यम् ।"

"ध्वनिरात्मा काव्यस्य कहकर दर्शाया कि, शब्दार्थ रूप शरीर काव्य है और ध्वनि उसकी आत्मा है

8.आचार्य वामन **-**

आचार्य वामन 'ने काव्यालंकार सूत्रवृत्ति' में -

काव्यं ग्राह्यमालंकारात् सौन्दर्यलंकारः' 'सच दोषगुणालङ्कार हानादानाभ्याम्' और 'काव्य शब्दोयम्'

उक्त कथनों के अनुसार आचार्य वामन ने गुण व अलंकार से संस्कारित शब्दार्थ को काव्य माना है

9.आचार्य मम्मट **-**

मम्मट ने काव्य को परिभाषित करते हुए लिखा कि-

तददोषौ शब्दार्थौ सगुणावनलङ्कृति पुनः क्वापि ।"

अर्थात् दोषरहित, गुणसहित और कहीं-कहीं अलंकार रहित काव्य है

10.जयदेव **-**

इन्होंने 'चंद्रालोक' में वर्णित किया है कि -

"अंगीकरोति यः काव्यं शब्दार्थावनलंकृति | यौन मनाने कम्पावनाया मनकति ॥"
आगे वे लिखते हैं कि -
"निर्दोषा लक्षणवती सरीतिर्गुण भूषिता । सालंकार रसानेक वृत्ति वाक्काव्य नामवाक् ||"
अर्थात् दोषरहित तथा रीति, गुण, अलंकार, रस वृत्ति से युक्त वाक्य ही काव्य है ।

11.भोज -
इन्होंने अपने ग्रन्थ 'सरस्वती कंठाभरण' में लिखा है कि

"निर्दोषं गुणवत् काव्यमलंकारैलंकृतम् | रसान्वितं कविं कुर्वन् कीर्तति प्रीतिंच विन्दुति ||"
अर्थात् दोष मुक्त, गुण युक्त, अलंकारों से अलंकृत सरस काव्य कीर्ति व यश प्रदान करता है।

12.हेमचंद -
आचार्य हेमचंद ने अपने 'ग्रन्थ काव्यानुशासन' में लिखा है कि -

"अदोषौ सगुणौ सालंकारौ च शब्दार्थी काव्यं"
अर्थात् दोष रहित, गुण व अलंकार सहित शब्दार्थ काव्य है ।

13.विश्वनाथ -
आचार्य विश्वनाथ का मत कि -
"वाक्यम् रसात्मकं काव्यम् ।"
अर्थात् रसात्मक वाक्य ही काव्य है।

14.जगन्नाथ -
आचार्य जगन्नाथ का मत है कि -

" रमणीयार्थ प्रतिपादकः शब्दः काव्यम् ।"
अर्थात् रमणीय अर्थ का प्रतिपादन करने वाले शब्द काव्य है ।

हिंदी विद्वानों द्वारा प्रदत्त काव्य लक्षण

हिंदी के कई मध्यकालीन आचार्यों व आधुनिक कालीन विद्वानों ने काव्य को परिभाषित करने का प्रयास किया है | उनमें से कुछ हिंदी के प्रमुख आचार्यों व विद्वानों के द्वारा दिए गए काव्य के लक्षण इस प्रकार हैं- केशवदास -

1.आचार्य केशवदास ने कहा है कि -

"जदपि सुजाति सुलच्छिनी, सुबरन सरस सुवृत्त
भूषन बिनु न राजई, कविता, वनिता मित्त ||'

इस प्रकार केशव ने कविता के लिए अलंकारों कीमहत्ता को स्वीकारा |

2.चिंतामणि -

अपने ग्रन्थ 'कविकल्पतरु' में आचार्य चिंतामणि ने गुण व अलंकार सहित, दोष मुक्त शब्दार्थ को काव्य मानाहै | वे लिखते हैं -

" सगुणालंकारन सहित, दोष रहित जो होइ |
शब्द अर्थताको कवित्त, करात विबुध सब कोइ ।"

3.कुलपति मिश्र -

अपने ग्रन्थ 'रस रहस्य' में काव्य लक्षण पर विचार करते हुए कुलपति मिश्र का कथन है कि -

'जग ते अद्भुत सुख सदन, शब्दरु अर्थ कवित्त |
यह लच्छन मैंने कियो समुझि ग्रन्थ बहु चित्त । "

अर्थात् अलौकिक आनंद प्रदान करने वाला शब्दार्थ काव्य है ।

उनका मानना है कि- -

"दोषरहित अरु गुणसहित, कछुक अल्प अलंकार |
सबद अरथ सो कबित है, ताको करो विचार ।"

इस प्रकार उन्होंने दोष रहित, गुणसहित और अल्प अलंकार युक्त शब्दार्थ काव्य को काव्य का लक्षण माना है |

4. देव

इन्होंने ने अपने ग्रन्थ 'शब्द रसायन' में काव्य पर विचार करते हुए कहा कि -

" शब्द सुमति मुख ते कढ़े, लै पद वचननि अर्थ |
छंद, भाव, भूषण, सरस, सो कहि काव्य समर्थ ||*

अर्थात् छंद, भाव, अलंकार और सरसता युक्त वे शब्द जो अर्थ अभिव्यक्ति में सक्षम हों, कहलात हैं।

5.भिखारीदास -

इनका का मत है कि

'जाने पदारथ दोष बिनु, पिंगल मत अविरुद्ध |
सो धुनि अर्थ वाक्यहन ले गुन, शब्द अलंकृत सों रति पाकी ॥ "

6.महावीर प्रसाद द्विवेदी -

"ज्ञानराशि के संचित कोश का नाम ही साहित्य है । "

7.आचार्य रामचंद्र शुक्ल -

"जिस प्रकार आत्मा की मुक्तावस्था ज्ञानदशा कहलाती है, उसी प्रकार ह्रदय की मुक्तावस्था रसदशा कहलाती है । ह्रदय की इसी मुकि की साधना के लिए मनुष्य की वाणी जो शब्दविधान करती है, उसे कविता कहते हैं।"
इस प्रकार शुक्ल जी ने रस युक्त काव्य को प्रमुखता दी है ।

8.मुंशी प्रेमचंद -

'साहित्य जीवन की आलोचना है | चाहे वह निबंध के रूप में हो, चाहे कहानी या काव्य के, उसमें हमारे जीवन की व्याख्या और आलोचना होनी चाहिए ।"

9.महादेवी वर्मा -

" कविता कवि-विशेष की भावनाओं का चित्रण है और वह चित्रण इतना ठीक है कि उसमें वैसी ही भावनाएँ किसी दूसरे के ह्रदय में आविर्भूत होती हैं ।"

10.सुमित्रा नंदन पंत -

"कविता हमारे परिपूर्ण क्षणों की वाणी है ।"

11.आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी

"जो वाग्जाल मनुष्य को दुर्गति, हीनता और परमुखापेक्षिता से न बचा सके, जो उसकी आत्मा को तेजोदीप्त न कर सके, जो उसके हृदय को पर दुःखकातर और संवेदनशील न बना सके, उसे साहित्य कहने में संकोच होता है।"
द्विवेदी जी साहित्य में मानवतावाद के पक्षधर थे।

12.डॉ. नगेंद्र **-**
आत्माभिव्यक्ति ही वह मूल है जिसके कारण कोई व्यक्ति साहित्यकार और उसकी कृति साहित्य बन पाती है। **"**

" रमणीय अनुभूति, उक्ति वैचित्र्य और छंद - इन तीनों का समंजित रूप ही कविता है।

पाश्चात्य विद्वानों द्वारा प्रदत्त काव्य लक्षण

1.अरस्तू काव्य लक्षण **-**

"कविता एक कला है। कला प्रकृति का अनुकरण है।**"** "भाषा के माध्यम से होने वाली अनुकृति ही काव्य है।"

2.ड्राइडन **-**

"काव्य रागात्मक और छंदोबद्ध भाषा के माध्यम से प्रकृति का अनुकरण है।"
अतः ड्राइडन कला और भाव पक्ष दोनो को स्वीकार करते थे ।

3.वर्ड्सवर्थ **-**
"कविता शांति के क्षणों में स्मरण किए गए प्रबल मनोवेगों का सहज उच्छलन है ।**"**

4.मैथ्यू अर्नाल्ड **-**

"काव्य से हमारा तात्पर्य उस कला से है, जो शब्दों के प्रयोग के माध्यम से कल्पना का मायाजाल बुनती है । **"**

काव्य लक्षण - निष्कर्ष

■ निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि जीवन की सार्थक शाब्दिक अभिव्यक्ति का नाम ही काव्य है। यह मानव मन के गहरे कोने तक झाँककर उसकी अनकही को जनकही बनाता है।

■ साहित्य उसके सुख-दुःख पीड़ा दर्द में मानव का सच्चा साथी बन अपनी सार्थकता सिद्ध करता है।

■ यह एक प्रकार से मानव के मनोभावों की शाब्दिक एवं कलात्मक अभिव्यक्ति है। इसके माध्यम से मनुष्य अपने सुख-दुःख, हर्ष-विषाद और जीवन की विविध स्थितियों को वाणी प्रदान करता आया है।

■ यह अपने समय का साक्षी और भविष्य के लिए सच्चा दस्तावेज होता है। आदमी को आदमीयत देना ही साहित्य का सच्चा कार्य है।यह अपने दायित्व का निर्वाह भलीभाँति करता है।

■ समाज के सुख और वैभव पूर्ण काल में यह मानव मन में राग-रंग से युक्त भावों की अनुगूँज बनता है तो त्रासद पूर्ण जीवन की स्तिथियों में यह उनकी

काय-हेतु

काव्य हेतु का अर्थ है, 'काव्य के उत्पत्ति का कारण।' गुलाब राय के अनुसार, 'हेतु का अभिप्राय उन साधनों से है जो कवि की काव्य रचना में सहायक होते हैं।' सामान्य शब्दों में काव्य हेतु का अर्थ है- काव्य की रचना के कौन से हेतु कारण या उपादान हैं।

काव्य हेतु को निम्न आधार पर समझ सकते हैं।

- भारतीय संस्कृति आचार्यों के मत
- रीतिकालीन आचार्यों के मत
- आधुनिक हिंदी विद्वानों के मत

भारतीय संस्कृति आचार्यों के मत

1.आचार्य भामह ने 'काव्यालंकार' में कवि की प्रतिभा को ही काव्य-सृजन का मूल हेतु माना है।

'गुरुपदेशादध्येतुं शास्त्रं जडधियोऽप्यलम्।
काव्यं तु जायते जातु कस्यचित् प्रतिभावतः।।'

2.आचार्य दण्डी ने नैसर्गिक प्रतिभा, निर्मल शास्त्र ज्ञान तथा सुदृढ़ अभ्यास को काव्य सृजन का हेतु माना है-

'नैसर्गिकी च प्रतिभा श्रुतं च बहुनिर्मलम्।
अमन्दाश्चाभि योगोऽस्याः कारणं काव्य संपदः।।'

3.आचार्य वामन ने 'काव्य-हेतु' के बदले 'काव्यांग' शब्द का प्रयोग किया है। इन्होंने लोक, विद्या और प्रकीर्ण को काव्यांग (काव्य-हेतु) स्वीकार किया है। यहाँ पर लोक का तात्पर्य लोक व्यवहार है-

'लोको विद्याप्रकीर्णस्य काव्यांगानि।'

आचार्य वामन प्रतिभा को ही काव्य-सृजन का मूल हेतु मानते हैं-

'कवित्वस्य बीजम् प्रतिभानं कवित्व बीजम्।'

4.आचार्य रुद्रट ने शक्ति (प्रतिभा), व्युत्पति और अभ्यास तीनों को काव्य हेतु माना है। इन्होंने प्रतिभा को शक्ति कहा है

आचार्य रुद्रट ने प्रतिभा के दो भेद- सहजा और उत्पद्या, को माना है। इनके अनुसार सहजा नैसर्गिक शक्ति है तथा उत्पाद्या व्युत्पत्ति शक्ति है।

5.आचार्य मम्मट ने शक्ति, निपुणता तथा अभ्यास का संयुक्त रूप में हेतु माना है।

'शक्तिनिपुणता लोकशास्त्र काव्याद्यवेक्षणात्।
काव्यज्ञ शिक्षाभ्यास इति हेतुस्तदुद्भवे।।'

6.आचार्य जयदेव ने चन्द्रालोक में लिखा है कि- 'श्रुत (व्युत्पत्ति) और अभ्यास सहित प्रतिभा ही कविता का हेतु है, जैसे मिट्टी-पानी के संयोग से बीज बढ़कर लता का रूप ग्रहण करता है।

7.पण्डित राज जगन्नाथ ने व्युत्पत्ति और अभ्यास को काव्य का हेतु नहीं माना है, वे प्रतिभा को ही काव्य का हेतु स्वीकार करते हैं, इसीलिए इन्हें प्रतिभावादी कहा जाता है-

'तस्य च कारणं कविगता केवलां प्रतिभा।'

8.आचार्य भट्टतौत ने प्रतिभा को 'नवनवोन्मेषशालिनी प्रज्ञा' कहा है।

9.आचार्य अभिनवगुप्त ने प्रतिभा को 'अपूर्ववस्तुनिर्माणक्षमा प्रज्ञा' कहा है।

10.आचार्य राजशेखर ने स्मृति, मति और प्रज्ञा को बुद्धि के तीन प्रकार माना है।

काव्य हेतु के सम्बन्ध में रीतिकालीन आचार्यों की दृष्टि

हिन्दी के रीतिकालीन आचार्यों ने काव्य हेतु पर विचार करते समय संस्कृत आचार्यों द्वारा निर्दिष्ट काव्य हेतुओं को ही स्वीकार किया। किसी मौलिक तत्व की उद्भावना नहीं की।अधिकांश रीतिकालीन विद्वानों ने प्रतिभा, व्युत्पत्ति और अभ्यास को काव्य हेतु माना है ।मध्यकालीन आचार्यों में कुलपति ने सर्वप्रथम काव्य हेतु का विवेचन किया।

आचार्य भिखारीदास ने काव्य रचना के लिए प्रतिभा, व्युत्पत्ति और अभ्यास तीनों को अनिवार्य माना। उसका कहना है कि जैसे रथ एक चक्र से नहीं चल सकता उसी प्रकार केवल प्रतिभा व्युत्पत्ति या मात्र अभ्यास से काव्य रचना सम्भव नहीं हो सकती है।

काव्य हेतु के सम्बन्ध में आधुनिक विचारकों की दृष्टि

आचार्य राम चन्द्र शुक्ल ने प्रतिभा को 'अन्त: करण की उद्भावित क्रिया' कहा है।अज्ञेय ने 'त्रिशंकु' में लिखा है की- 'कला सामाजिक अनुपयोगिता की अनुभूति के विरुद्ध अपने को प्रमाणिक करने का प्रयत्न, अपर्याप्तता के विरुद्ध विद्रोह है।'मैथिलीशरण गुप्त के अनुसार- 'जो अपूर्ण कला उसी की पूर्ति है'

गोविन्द त्रिगुणायत ने मनुष्य की मनन शीलता को ही काव्य का प्रमुख हेतु मानते हैं उन्होंने लिखा है की 'मेरी समझ में काव्य की जनयित्री मनुष्य की प्राणभूत विशेषता उसकी मनन की प्रवृत्ति है।' इस प्रकार वे प्रतिभा व्युत्पत्ति आदि को काव्य का सहायक हेतु मानते हैं। किन्तु विद्वानों का विशाल समूह साहित्य रचना के लिए प्रतिभा, व्युत्पत्ति और अभ्यास को महत्त्व देता है।

सुरेश अग्रवाल के शब्दों में 'साहित्य के उदय के लिए साहित्यिक प्रतिभा और विज्ञान के आविष्कार के लिए वैज्ञानिक प्रतिभा नितान्त अनिवार्य है। हां मनन शीलता इन दोनों को अधिकाधिक विकसित एवं सुनियोजित करने में बहुत सहायक होती है, इस बात में कोई संदेह नहीं। मननशीलता को हम व्युत्पत्ति और अभ्यास का समन्वित रूप कह लें, तो हमारे विचार में अधिक उचित होगा।'

निष्कर्ष:- उपरोक्त संस्कृत आचार्य,रीतिकालीन आचार्य एवं हिंदी के विद्वानों द्वारा सर्वांगीण विवेचन के आधार पर हम निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि संस्कृत आचार्यों द्वारा दिए गए काव्य हेतु को ही रीतिकालीन आचार्यों ने स्वीकार किया । निष्कर्ष रूप से हम देखते हैं की मुख्यतः काव्य हेतु के तीन भेद है प्रतिभा,व्युत्पत्ति और अभ्यास ।

काय-हेतु के भेद

काव्य हेतु का अर्थ है, 'काव्य के उत्पत्ति का कारण।' गुलाब राय के अनुसार, 'हेतु का अभिप्राय उन साधनों से है जो कवि की काव्य रचना में सहायक होते हैं।' सामान्य शब्दों में काव्य हेतु का अर्थ है- काव्य की रचना के कौन से हेतु कारण या उपादान हैं।

काव्य हेतु का विभाजन
भारतीय काव्यशास्त्र में काव्य हेतु (kavya hetu) के तीन भेद बताए गए हैं-

1. प्रतिभा, **2.** व्युत्पत्ति, **3.** अभ्यास

राजशेखर ने प्रतिभा के दो भेद किये हैं-
क. कारयित्री प्रतिभा, ख. भावयित्री प्रतिभा

कारयित्री प्रतिभा को आचार्यों ने तीन भागों में विभाजित किया है-
i. सहजा, **ii.** आहार्या, **iii.** औपदेशिकी

1. प्रतिभा

काव्य का पहला हेतु प्रतिभा है, जो काव्य की अनिवार्य शक्ति है। जिसके बिना काव्यसृजन संभव नहीं होता है। इसीलिए इसे कवित्व का बीज माना गया है। प्रतिभा को जन्मजात, दैवी शक्ति और संस्कार रूप में माना है।

आचार्य मम्मट ने प्रतिभा को 'शक्ति' माना है, वे शक्ति, निपुणता और अभ्यास को सम्मिलित रूप से काव्य हेतु मानते हैं। 'काव्य प्रकाश' में उन्होंने लिखा है कि-'शक्तिर्निपुणतालोकशास्त्र काव्याद्यवेक्षणात्।काव्यज्ञशिक्षयाभ्यास इति हेतुस्तदुद्भवे।।'

अर्थात् शक्ति (कवित्व का बीज रूप संस्कार), लोक-व्यवहार, शास्त्र तथा काव्य आदि के अनुशीलन और ज्ञान से उत्पन्न योग्यता एवं शिक्षा द्वारा प्राप्त अभ्यास ही काव्य के हेतु है।

आचार्य राजशेखर ने 'काव्यमीमांसा' में काव्य हेतु 'प्रतिभा' का विशद् विवेचन किया है। उन्होंने ही प्रतिभा काव्य हेतु के दो भेद किये-
क. कारयित्री प्रतिभा ख. भावयित्री प्रतिभा

उन्होंने लिखा की 'काव्य की सर्जना करने वाली' को कारयित्री और उसका 'रसास्वादन कराने वाली' को भावयित्री प्रतिभा कहते हैं। उन्होंने पुन: ' कारयित्री प्रतिभा' के तीन भेद किये-

i. सहजा, ii. आहार्या, iii. औपदेशिकी

आचार्य राजशेखर 'सहजा' को जन्मजात प्रतिभा, अभ्यास द्वारा अर्जित प्रतिभा को 'आहार्या' और शास्त्र आदि के उपदेश से प्राप्त होने वाली प्रतिभा को 'औपदेशिकी' मानते हैं। इसी के आधार पर कवियों की क्रम कोटि सारस्वत, आभ्यासिक और औपदेशिक का निर्धारण किया।

2. व्युत्पत्ति

काव्य का दूसरा हेतु व्युत्पत्ति है। राजशेखर के अनुसार, उचित-अनुचित का विवेक व्युत्पत्ति है- 'उचितनुचिता विवेको व्युत्पत्ति:।

'वे इस व्युत्पत्ति हेतु का अर्थ 'बहुज्ञता' मानते हैं।

आचार्य वामन ने इसका अर्थ 'विद्या परिज्ञान' माना है।

आचार्य रुद्रट के अनुसार 'छन्द, व्याकरण, कला, लोकस्थिति, पद और पदार्थो के विशेष ज्ञान से उचित अनुचित को सम्यक् परिज्ञान ही व्युत्पत्ति है।'

आचार्य मम्मट ने व्युत्पत्ति को 'निपुणता' माना है। उनके अनुसार निपुणता लोक-जीवन के अनुभव और निरीक्षण, शास्त्रों के अनुशीलन तथा काव्यादि विवेचन का परिणाम है।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि बहुज्ञता में व्याकरण, शास्त्र, पुराण, इतिहास, लोकज्ञान आदि इसमें समाहित है, जो कवि अर्जित करता है और काव्य रचना में प्रयुक्त कर उसे व्यापक अर्थ संदर्भ से युक्त बनाता है।

3. अभ्यास

आचार्य राजशेखर के अनुसार, 'निरन्तर प्रयास करते रहने को अभ्यास कहते हैं।' कहने का तात्पर्य यह है की अभ्यास व अनुशीलन, काव्य रचना को दोषमुक्त और स्वच्छ बनाने में सहायक होता है।

निष्कर्ष रूप में प्रतिभा ही महत्वपूर्ण काव्यहेतु सिद्ध होता है। व्युत्पत्ति और अभ्यास उसके सहायक तत्त्व माने जा सकते हैं, जो काव्य रचना को पूर्णता प्रदान करने में आवश्यक है।